भाषा बहता नीर

डॉ. नरेन्द्र सिंह ठाकुर
प्राध्यापक, हिन्दी विभाग,
शासकीय स्वशासी कन्या स्नातकोत्तर उत्कृष्टता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)

सारांश -

आर्य जब भारत आये तो यहां की स्थानीय भाषाओं से सम्पर्क हुआ, इनसे मिलकर उन्होंने नई भाषा ब जिसमें ऋग्वेद की रचना हुई । इस भाषा को वैदिक कहा जाता है। बाद में जब इसका रूप विकसित और स्थि तो पाणिनी ने इसे संस्कृत बना दिया, पतंजलि के महाभाष्य और कात्यायन के वार्तिक ने इसके रूप को स्थि दिया जिसे बहुत बाद में इसी स्थिरता या अपरिवर्तनीयता के कारण 'कूप जल' कहा गया है। स्थानीय भाषाएं फि फलती-फूलती रहीं और संस्कृत से ही उपजीव्य ग्रहण करती रहीं । पाली, प्राकृत और अपभ्रंश के बाद जब हि तक आते हैं तो भाषा के इस निरंतर परिवर्तित प्रवर्धित रूप को देखकर ही कहा गया "भाषा बहता नीर"।

मुख्य शब्द - भाषा, स्थिरता, अपभ्रंश, प्रवाहित।

भाषा का व्यापक अर्थ है, अभिव्यक्ति का माध्यम। जगन्नाथ दास रत्नाकर के उद्धव प्रसंग में जब कृ गोपियों को समझाने ब्रज जाने लगते हैं तो कृष्ण उनसे जो संदेश कहते हैं वह इस प्रकार कहते हैं- नैक कही बै अनेक कही बैनन, रही-सही कह दीन्हीं हिचकीनी सों। उनकी अभिव्यक्ति का माध्यम नैन, वचन और हिचकियां संसार के विविध प्राणी जो हमारी तरह बात नहीं कर पाते वे कई तरह से यथा-चीं चीं करके, रंभाकर, दहाड़ भौंककर, हिनहिना कर आदि कई तरीकों से अपनी बात को अभिव्यक्त करते हैं।

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है, उसका काम इन तरीकों से नहीं चल सकता। समाज में रहने के का वह विचार-विमर्श भी करता है, उसकी अनुभूतियां इतनी गूढ़ होती हैं कि उन्हें इशारों या अन्य तरह के उच्चारणों अभिव्यक्त नहीं किया जा सकता । उसने अपने विचार विनिमय के लिए जिस माध्यम का विकास किया वह भा है। कह सकते हैं कि "भाषा हमारे विचार-विमर्श, सोचने, मनन करने एवं जो अनुभूतियां होती हैं उन्हें दूसरे त सम्प्रेषित करने का साधन है।" यह अन्य मानवेतर प्राणियों की अभिव्यक्ति के माध्यमों से अलग एवं विशिष्ट द का माध्यम है। पर यह ध्यान रखना चाहिए कि यह सम्प्रेषण मानव के मुख के उच्चारण अवयवों से निकली सार्थ ध्वनि से होता है। शरीर के अन्य अंगों के हाव-भाव का सम्प्रेषण भाषा नहीं है। यहॉं यह भी ध्यान रखना चाहि कि मुख से निकलने वाली सभी ध्वनियां भाषा नहीं होती । सार्थक ध्वनियां ही भाषा हैं। सार्थक भाषा समाज के द्वा स्वीकृत ध्वनि प्रतीक होते हैं। परंपरा और व्यवहार के द्वारा धीरे-धीरे समाज के द्वारा सर्वमान्य भाषा का विकास हो है। यह ऐसी व्यवस्था होती है जिससे समाज के सभी बोलने वाले परिचित होते हैं।

इस तरह हर समाज की अपनी भाषा होती है। जितने क्षेत्र में ध्वनि प्रतीक प्रचलित होते हैं, या एक-दूसरे से समझे जाते हैं उस क्षेत्र की एक भाषा होती है । जहां समाज दूरी के कारण अपने अलग ध्वनि प्रतीक विकसित कर लेता है, वहां की भाषा अलग होती है, इसलिए कहा गया है- तीन कोस पर पानी बदले, चार कोस पर बानी।

भाषा की उत्पत्ति के कई सिद्धान्त प्रचलित हैं, जैसे-दैवी उत्पत्ति का सिद्धान्त, "हम अभी तक यह नहीं कह सकते कि भाषा क्या है ? यह प्रकृति की उपज हो सकती है।" यह मानवीय कला की कृति या परमात्मा की देन हो सकती है।"[1] ध्वनि अनुकरण सिद्धान्त, विस्मय बोधक सिद्धान्त, टा-टा सिद्धान्त, संगीत सिद्धान्त, संपर्क सिद्धान्त । भाषा की उत्पत्ति को लेकर इतने अधिक सिद्धान्त आए कि भाषा वैज्ञानिकों ने इस पर होने वाले विचार-विमर्श को अनावश्यक कह दिया "1866 ई. में पेरिस में स्थापित भाषा विज्ञान-परिषद के संस्थापकों ने नियम बनाकर परिषद में भाषा की उत्पत्ति के प्रश्न पर विचार करने को निषिद्ध घोषित कर दिया।[2]" मान के अतिरिक्त जिन प्राणियों की भाषा का अनुमान लगाया गया है उनमें मधुमक्खियों की भाषा, पक्षियों की भाषा, प्राइमेट की भाषा, डाल्फिन की भाषा, पेड़-पौधों की भाषा पर भी अध्ययन किए गए हैं।

सभी तथ्यों को ध्यान में रखते हुए भोलानाथ तिवारी ने भाषा की एक सरल परिभाषा दी है-"भाषा उच्चारण अवयवों से बोली जाने वाली स्वीकृत ध्वनि प्रतीकों की वह व्यवस्था है जिसके द्वारा समाज विशेष के लोग आपस में विचारों का आदान प्रदान करते हैं।"[3]

संसार में लगभग तीन हजार भाषाएं पाई जाती हैं। इन में से कुछ का अस्तित्व अब समाप्त हो गया है। इन भाषाओं के वर्गीकरण के कई आधार प्रचलित हैं जैसे-महाद्वीप के आधार पर, देश के आधार पर, धर्म के आधार पर, काल के आधार पर, आकृति के आधार पर, परिवार के आधार पर और प्रभाव के आधार पर। इनमें महाद्वीप के आधार पर, आकृति मूलक और पारिवारिक वर्गीकरण महत्वपूर्ण माने जाते हैं । महाद्वीप के आधार पर संसार की भाषाओं को अफ्रीका, अमरीका, प्रशांत महासागर और यूरेशिया (यूरोप और एशिया) खंडों में बांटा गया है। आकृति मूलक वर्गीकरण में योगात्मक और आयोगात्मक दो भेद किए गये हैं। सबसे महत्वपूर्ण प्रचलित आधार पारिवारिक वर्गीकरण का ही है। विश्व में मुख्यतः निम्नांकित भाषा परिवार हैं- (1) भारोपीय (2) द्रविड़ (3) चीनी (4) सेमेटिक-हेमेटिक (5) यूराल-अल्ट्राइक (6) काकेशियन (7) जापानी-कोरियाई (8) मलय-पालिनेशियन (9) आस्ट्रो-एशियाटिक (10) बुशमेन (11) बांटू (12) सूडान (13) अमरीकी, आदि

भारोपीय और द्रविड़ परिवार के अतिरिक्त भी कुछ परिवार ऐसे हैं जिनकी भाषाएं या तो भारत के नजदीक बोली जाती हैं, या उनका भारतीय भाषाओं से सम्पर्क रहा है, या उनका भारतीय भाषाओं पर प्रभाव पड़ा है। चीनी परिवार की तिब्बती, वर्मी, थाई, मणिपुरी, गारो, बोडो, नागा, नेवारी आदि भाषाएं या तो भारतीय सीमा पर बोली जाती हैं या भारत के अन्दर भी बोली जाती हैं। सेमेटिक-हेमेटिक परिवार जो अफ्रीका से लेकर पश्चिम एशिया तक फैला है, का प्रभाव भारत की हिन्दी, मराठी और गुजराती पर देखा गया है। मलय-पालेनेशियन परिवार की जावा, सुमात्रा, बाली आदि जगहों की भाषा में संस्कृत के शब्द बहुत मिलते हैं। एशिया माइनर के एक स्थान की खुदाई में मिले कीलाक्षर लेखों से 'हित्ति' भाषा का पता चला । भारत-हित्ती परिवार की इस भाषा का काल 2900 ई.पू. का माना जाता है। लगभग 500 वर्षो तक इसके प्रमाण मिलते हैं । यह 'सामी' से प्रभावित लगती है। भारोपीय भाषाओं से इसकी निकटता देखने को मिलती है । बहुत से वैदिक देवताओं के नाम 'हित्ती' में थोड़े बहुत फेरबदल के साथ मिल जाते हैं।

'हिन्दी' भारोपीय परिवार की आधुनिक काल की भाषा है । अखण्ड भारत और लगभग सम्पूर्ण यूरो... बोले जाने के कारण इसे 'भारोपीय परिवार' कहा जाता है। अखण्ड भारत से आशय भारत, बांग्ला देश, ... पाकिस्तान, अफगानिस्तान है तथा ईरान और यूरोप में रूस, रूमानिया, फ्रांस, पुर्तगाल, स्पेन, इंग्लैंड, जर्मनी आदि ... अमेरिका, कनाडा, अफ्रीका, और आस्ट्रेलिया के कई हिस्सों में इसका प्रयोग होता है। क्षेत्रफल की दृष्टि से यह ... बड़ा परिवार है।

वे लोग जिनके भारोपीय भाषा के प्रयोग करने के प्रमाण मिलते हैं, और वे भारत आए उनके लिए 'वि... शब्द का प्रयोग मिलता है। भारत की ओर गमन करने से पूर्व इनकी दो शाखाएं हो गई एक भारतीय और ... ईरानी । इनके पूर्वज कहां से आए और कहां गए इसके पुख्ता प्रमाण नहीं मिलते, 'हित्ती' से सिर्फ संबंधों का ... चलता है, इसके प्रमाण नहीं हैं कि इनके पूर्वज 'हित्ती' थे । ईरानी आर्यों की दो भाषाएँ मिलती है, अवेस्ता ... प्राचीन फारसी। (आधुनिक फारसी नहीं) ऐसा अनुमान है कि वे समूह जो भारत की ओर आए, वे अपने साथ अ... भाषा और अपने देवता लाए जो यहाँ की भाषा और स्थानीय देवताओं के समन्वय से 'वेद' की रचना करते हैं। ऋ... की भाषा और उसमें वर्णित देवता 'अवेस्ता' से मिलते-जुलते हैं । बाद के तीन वेदों पर स्थानीय भाषा (जो ज्ञात ... है) और स्थानीय लोकाचार का विपुल मात्रा में प्रभाव है। इसीलिए वेदों की भाषा को 'वैदिक भाषा' कहा जाता ... जो बहुत विकसित नहीं है और बाद की विकसित भाषा को 'लौकिक भाषा (क्लासिकल) कहा जाता है। पाणिनि ... समय इसको स्थायित्व मिला और इसका व्याकरण बना तब इसे 'संस्कृत' कहा गया । इस तरह हम देखते हैं ... दुनिया भर की उपलब्ध भाषाओं और उपलब्ध साहित्य में संस्कृत और वेद न सिर्फ सबसे प्राचीन हैं, उत्कृष्ट भी ... ''भारत में आने वाले आर्यों के दल अपने साथ यज्ञ परायण संस्कृति लाये थे। प्राचीन ईरानी संस्कृति के अध्य... से विदित होता है कि भारत में प्रवेश करने से पूर्व ही आर्यों में इन्द्र, मित्र, वरूण आदि की उपासना प्रचलित ... आर्य ऋषि देवताओं की प्रशंसा में सूक्तों की रचना करते थे । यह 'सूक्त' ऋषि परिवारों में परंपरागत रूप से सुर... रहे और हमें अविकलित रूप में भारोपीय-परिवार का प्राचीनतम साहित्य 'ऋक संहिता' के रूप में प्राप्त हुआ ...

आर्यों के भारत आने के पूर्व यहां जो जातियां आयीं उनका और उनकी भाषाओं का 'संस्कृत' पर ... प्रभाव पड़ा इसे जानने के लिए यह जानना आवश्यक है कि वे कौन-कौन जातियाँ थीं जो आर्यों के पूर्व भारत आ... भारत के 'मूल निवासी' जैसी किसी जाति का अब तक कोई पता नहीं चला है । उस समय जब देशों की भौगोलि... सीमाएँ नहीं बनी होंगी, अविकसित घुमन्तू समाज भोजन, पानी और सुरक्षित कन्दराओं की तलाश में सारी पृथ्वी ... घूमा करते होंगे । यह क्षेत्र जिसे अब हम भारत कहते हैं, इन मामलों में अन्यन्त समृद्ध रहा है। दूसरे आर्यों के भा... आगमन को हम विदेशियों का 'माइग्रेशन' न समझें बल्कि ''सबै भूमि गोपाल की'' समझकर स्वाभाविक प्रक्रिया सम... उपलब्ध प्रमाणों के आधार पर हम उन जातियों और उनके प्रभावों का अध्ययन करेंगे जो आर्यों से पूर्व भारत आ...

नेग्रिटो- ये अफ्रिका के निवासी थे जो दक्षिणी अरब, ईरान होकर भारत आये । इनका प्रसार पूरे भा... में हुआ फिर इनमें से कुछ असम, वर्मा, इंडोनेशिया, मलय आदि जगहों पर गये । इस समय फिलिपीन, बलूचिस्ता... दक्षिण भारत में तमिल भाषी पनियर, कदिर, कुरूम्बा, इरूला, असम में मंगोल और किरात तथा अंडमान में मिल... हैं। अंडमान में इनकी संख्या एक हजार के आसपास है, जो अब तक अपनी भाषा का प्रयोग करते हैं। पीपल ... पूजा और धनुषबाण का प्रयोग भारत ने इनसे ही सीखा। संभवतः 'चमगादड़' शब्द इनकी भाषा से ही आया । भारत... भाषाओं पर इनका प्रभाव नहीं मिलता।

ISSN 2395-051X

आस्ट्रिक या आग्नेय- भारत में आग्नेय दिशा से आने के कारण इन्हें 'आग्नेय' कहा जाता है। इनका मूल स्थान भूमध्य सागर माना जाता है जहाँ से ये ईराक, ईरान होते हुए भारत आए, भारत से इंडोनेशिया और आस्ट्रेलिया तक पहुँच गये । ये बड़ी संख्या में भारत के बड़े क्षेत्र में फैल गये थे । भारत की कोल, मुन्डा, खासी, मानखमेर, निकोबारी आदि भाषाएं इन्हीं की हैं। श्री रत्न स्वामी ने अपनी पुस्तक में यह राय जाहिर की है कि आग्नेय, द्रविणों की संतान हैं। किन्तु इस मत को स्वीकार नहीं किया गया, उनकी नजदीकी के प्रमाण अवश्य मिले हैं। मोहन जोदड़ो में नर्तकी की जो मूर्ति मिली हैं, वह आग्नेय जाति की है। आग्नेय जाति के लोग द्रविण जाति की संतान हैं, ऐसा न कहकर उन्होंने इस संभावना पर विचार किया है कि द्रविण लोग आग्नेय भंडार से विकसित हुए हैं या नहीं।[5]

जब आर्य आये तब आस्ट्रिक भाषा इस क्षेत्र में खूब प्रचलित थी और उस भाषा के अनेक शब्दों ने आर्य-भाषा-भंडार में प्रवेश पा लिया । वन और वन जन्तु संबंधी आर्य-भाषाओं में ऐसे कितने ही शब्द हैं, जिनकी व्युत्पत्ति आस्ट्रिक धातुओं से बतलायी जाती हैं। रक्त मिश्रण के कारण प्रायः सबने विजेता (आर्य) जाति की भाषा सीख ली । आस्ट्रिक भाषाओं ने पूर्वी भारत की भाषाओं को कई रूपों में प्रभावित किया है।

किरात या मंगोलायड- ये मूलतः वांत्सी-क्यांग नदी के मुहाने के पास रहने वाले आदि मंगोल थे । इनकी एक शाखा से चीनी सभ्यता और संस्कृति का निर्माण हुआ। इनकी एक शाखा बह्मपुत्र के रास्ते भारत आई और उत्तरी पहाड़ी भागों में फैल गयी । इनका आगमन 'यजुर्वेद' रचे जाने के पहले हो गया था। भारत में इन पर आस्ट्रिकों का प्रभाव पड़ा, इनकी भाषा चीनी परिवार की तिब्बती-वर्मी शाखा से जुड़ी है। इनकी प्रमुख भाषाएँ मेइबेह, कचिन, नागा, गारो, बोडो, लोलो, कुकीचिन, लोचा तथा नेवारी आदि हैं। इनका प्रभाव नेपाली पश्चिमी तथा मध्य पहाड़ी, असमी एवं बंगाली पर देखा जा सकता है। हिन्दी, पंजाबी आदि भाषाओं में भी कुछ शब्द इन किरातों की भाषाओं के मिलते हैं।

द्रविण- ऐसा माना जाता है कि इनका मूल स्थान अफ्रीका था, वहां से भूमध्यसागर, ईरान, अफगानिस्तान से लेकर पूर्वी भारत तक फैल गए । 4000 ई. पू. के लगभग आये इन लोगों की प्रमुख भाषाएं तमिल, तेलगु, कन्नड़ और मलयालम हैं। इनके अतिरिक्त तुलु, कोडगु, कोलमी, टोडा, गौंड, खन्द, उराँव, ब्राहुई तथा माल्तो आदि भाषाओं की जानकारी भी मिलती है। ''भाषा के क्षेत्र में आर्य भाषाओं पर द्रविण-प्रभाव पर्याप्त है।'' इस प्रभाव को तीन वर्गो में रखा जा सकता है- ध्वनि, व्याकरण और शब्द । ध्वनियों के क्षेत्र में इनका सबसे बड़ा प्रभाव आर्य भाषा में 'ट' वर्ग का विकास है। पश्तो एवं दरद भाषाओं में भी 'ट' वर्ग इन्हीं का प्रभाव है। आर्य भाषा से संघर्षी व्यंजनों का लोप और संयुक्त व्यंजनों का विकास तथा स्वरभक्ति इन्हीं का प्रभाव है। अनुमान है कि आधुनिक आर्य भाषाओं में संयुक्त क्रियायें, परसर्ग, तुलनात्मक विशेषण आदि के प्रयोग द्रविण भाषा से संस्कृत, पालि, प्राकृत, अपभ्रंश और आधुनिक भाषाओं में आए । शब्दों की संख्या हजारों में है, कुछ शब्द पुराने द्रविण शब्द से ध्वनि साम्य के कारण पहचाने जा सकते हैं, पर ऐसे शब्द बहुत हैं जिनका आर्यों ने जाने-अनजाने संस्कृतीकरण कर दिया था।[6]

भारत में आर्य भाषा का विकास- आरंभिक आर्य भाषा कदाचित तत्कालीन ईरानी भाषा से अलग न थी । ऋग्वेद के प्रथम एवं दसवें मण्डलों की रचना बाद में हुई, क्योंकि शेष मण्डलों की भाषा अपेक्षाकृत अवेस्ता के निकट है। वैदिक संहिताओं की भाषा तत्कालीन बोलचाल की भाषा से कुछ भिन्न है क्योंकि एक तो यह 'काव्य भाषा' थी और दूसरे यह यहाँ की 'स्थानीय' भाषा नहीं थी । ब्राह्मणों, उपनिषदों की भाषा कुछ अपवादों को छोड़कर

संहिताओं के बाद की है। इनका गद्य तत्कालीन बोलचाल की भाषा के बहुत निकट है। इस समय तक आर्य के मध्य तक फैल चुके थे, और वे यहाँ के 'स्थानीय' लोगों से भाषा के स्तर पर एक रूप होने लगे थे । भाषा यह विकसित रूप 'सूत्रों' में मिलता है। भाषा का यह रूप 700 ई.पू. से मिलने लगता है। पाँचवी सदी ई.पू. पाणि ने इस विकसित भाषा का व्याकरण 'अष्टाध्यायी' लिखा और संस्कृत के विद्वानों में स्वीकृत परिनिष्ठित रूप को नि बद्ध कर स्थिर किया जिसे लौकिक या क्लासिकल कहा गया । अब यह पण्डितों की भाषा बन गई और बोलच की भाषा नहीं रह गई । संस्कृत के इस तरह 'स्थिर' रूप धारण करने पर ही उसे 'कूप जल' कहा गया हालाँ बाद में यह बोलचाल की उन भाषाओं से जिन्होंने साहित्यिक रूप धारण किए, संपर्क में रही और कुछ न कुछ ग्र करती रही । इस समय तक सामाजिक रूप से भी एक स्थिरता आ गई थी और सारी जातियों के प्रभाव एकीकृ हो चुके थे, पर स्थानीय स्तर पर यह भेद अभी बने हुए थे।

इस तरह प्राचीन आर्य भाषा के वैदिक और लौकिक दो रूप मिलते हैं। वैदिक रूप को 'प्राचीन संस्कृत 'वैदिकी', 'वैदिक संस्कृत' या 'छन्दस' आदि नाम भी दिये गये हैं। संस्कृत का यह रूप वैदिक संहिताओं, ब्राह्मण (ग्रन्थों), आरण्यकों तथा प्राचीन उपनिषदों तक में मिलता है, सभी की भाषा स्थिर नहीं है। संभव है यह बोलचाल की भाषा भी रही हो। वैदिक के भी दो रूप अलग-अलग दिखाई देते हैं। पहले और दसवें मण्डल को छोड़कर ऋग्वेद की भाषा का प्राचीन वैदिक रूप मिलता है और पहले, दसवें मण्डल की भाषा, बाकी वेद, ब्राम्हण, आरण्यक एवं उपनिषदों तक की भाषा का दूसरा रूप मिलता है। इस काल में भाषा के तीन रूप उत्तरी, मध्यदेशी और पूर्वी मिलते हैं।

लौकिक, संस्कृत का मूल आधार उत्तरी क्षेत्र की भाषा थी पर इस पर मध्यदेशी और पूर्वी के भी प्रभाव हैं । यह 'पाणिनीय' संस्कृत पण्डितों की साहित्यिक और बोलचाल की भाषा थी । पाणिनी ने उसे भाषा कहा, बोलचाल की अशुद्धियाँ दूर करने के लिए 'कात्यायन' ने उसके 'वार्तिक' लिखे और उसे व्याकरण में बाँध दिया । 'भाषा' के अर्थ में 'संस्कृत' शब्द का पहला प्रयोग वाल्मीकि रामायण में मिलता है। जिसका अर्थ था संस्कार की गई, शिष्ट भाषा जो अप्राकृत अर्थात् प्राकृत नहीं है। प्राकृत का अर्थ स्थानीय बोलचाल की भाषा मान सकते हैं। "वैदिक और लौकिक में अन्तर के प्रमुख कारण हैं- (1) वैदिक भाषा का बहुत कुछ स्वरूप बाहर से बनकर आया था, उसमें यहां जो परिवर्तन हुए थे भारतीय वातावरण, समाज और आर्येतर भाषाओं के तुरंत पड़े हुए प्रभाव से ही उत्पन्न थे, किन्तु संस्कृत भाषा के बनने तक ये प्रभाव बहुत गहरे पड़ चुके थे और उन्होंने संस्कृत भाषा की पूरी व्यवस्था को प्रभावित किया । (2) यहां आने पर आर्यो ने नागरिक सभ्यता द्रविणों से अपनाई, अतः जीवन में अधिक एकरूपता आई, व्यवस्था बढ़ी। इसका प्रत्यक्ष एवं परोक्ष प्रभाव उनकी भाषा पर भी पड़ा और उसमें भी एकरूपता आई। (3) नागरिक जीवन में नियमित पठन-पाठन एवं साहित्य-रचना को प्रोत्साहन मिला, इससे भाषा को एक परिनिष्ठित रूप देना पड़ा। परिणामतः भाषा में परिनिष्ठन आया, अपवाद निकल गए, किन्तु साथ ही उसमें शिष्ट जीवन की कृत्रिमता की गन्ध भी आ गई । (4) समाज के विकास के साथ-साथ चिन्तन एवं ज्ञान-परिधि में विस्तार हुआ, भाषा का नियमित अध्ययन-विश्लेषण होने लगा, व्याकरण लिखे जाने लगे, लोगों ने सरलता तथा विचारों की सफल अभिव्यक्ति आदि की दृष्टि से भाषा की एक रूपता, नियमितता के महत्व को समझा, अतः पूर्ववर्ती भाषा की जटिलताएं धीरे-धीरे अपने आप छट गईं। (5) ध्वनियों के विकास आर्येतर प्रभावों, आर्येतर लोगों द्वारा उनका ठीक उच्चारण न किये जाने एवं सरलीकरण की प्रवृत्ति के कारण हुआ । (6) शब्दों में परिवर्तन का कारण था, पुराने जीवन से आगे बढ़ने के कारण अनेक शब्दों का छूट जाना, तथा नए जीवन की अभिव्यक्ति की पूर्ति के लिए नए शब्दों का आगमन । लौकिक संस्कृत

में से नए शब्द कुछ तो द्रविड़, आस्ट्रिक आदि भारतीय भाषाओं से लिये गए, कुछ आवश्यकतानुसार ईरानी, ग्रीक या अरबी आदि से आए तथा कुछ व्याकरण के नियमों या भ्रामक व्युत्पति के आधार पर बन गए, या बनाए गए।"

संस्कृत में विभाजीय भाषाओं के लगभग दो हजार शब्द मिलते हैं । इनमें आस्ट्रिक, द्रविण, यूनानी, रोमन, अरबी, ईरानी, तुर्की, चीनी भाषा के हैं। इसके अलावा तत्कालीन बोलियों के शब्द भी आए हैं।

मध्यकालीन आर्य भाषा का विकास-

मध्यकालीन आर्य भाषा को 'प्राकृत' भी कहा गया है। आर्यों के भारत आगमन के पूर्व यहां के विभिन्न प्रदेशों की जो जन भाषाएं रहीं होगी उन्हें भी 'प्राकृत' कहा जा सकता है। नेमी साधु ने काव्यालंकार की टीका में कहा है कि "प्राकृतेति, सकलजगज्जन्तुनां व्याकरणादिमिरनाहस्संस्कारः सहजों वचन-व्यापारः प्रकृति तत्र भवः सेव वा प्राकृतम्" ।[8] इस रूप में प्राकृत पुरानी भाषा है और संस्कृत उसका संस्कार करके बनाई हुई बाद की भाषा । ग्रियर्सन इसे 'प्राइमरी प्राकृत' कहता है। इसी जनभाषा के साथ मिलकर जो नई भाषा बनी होगी उसे 'वैदिक' कहा जाता है। "जैसे जल सागर में प्रवेश करता है और सागर से ही निकलता है, उसी प्रकार सभी भाषाएं प्राकृत में ही प्रवेश करती हैं, और प्राकृत से ही निकली है।"[9] 'वैदिक' से पाणिनी तक आते-जाते संस्कृत परिष्कृत, साहित्यिक भाषा बन गई, उसका मानक रूप स्थिर हो गया। इसका एक परिणाम यह भी हुआ कि जो संस्कृत भाषा 'जनभाषा' बनती जा रही थी वह अब 'जन' से दूर होती गई और पुरानी प्राकृत का विकास जनभाषा के रूप में हुआ।" यह प्राकृत भाषा वैदिक या लौकिक संस्कृत से उद्‌भूत नहीं है, अपितु तत्कालीन जनभाषा से उद्‌भूत है या उसका विकसित रूप है।"[10]

आधुनिक कालीन आर्य भाषाएँ -

विभिन्न अपभ्रंशों से जिन आधुनिक आर्यभाषाओं का विकास हुआ वे भारत में या भारत के एक-दो पड़ौसी देशों में बोली जाती हैं। इनमें प्रमुख हैं सिन्धी, पंजाबी, गुजराती, मराठी, उड़िया, बंगाली, असमी, नेपाली, सिंहली, जिप्सी और हिन्दी।

संक्रातिकाल -

आधुनिक कालीन आर्यभाषाओं के अपना स्वरूप लेने और अपभ्रंश के बीच जो साहित्य मिलता है उसमें संक्रान्ति कालीन भाषा का पता चलता है, और उसकी स्थानीयता का भी । 'सनेह रासक', 'प्राकृत पैंगलम', एवं 'पुरातन प्रबंध संग्रह' में उत्तर-पश्चिम की भाषा मिलती है। उक्त व्यक्ति प्रकरण में कोसल प्रदेश की, 'वर्ण रत्नाकर', 'कीर्तिलता' तथा 'चर्या पदों में प्राच्य देश की और 'ज्ञानेश्वरी" में महाराष्ट्र प्रदेश की भाषा मिलती है। यह अपभ्रंश प्रभावित किन्तु उसके साहित्य रूप से इतर जनसाधारण में प्रचलित तत्कालीन लोकभाषाएं थी। अद्‌दहमाण या अब्दुल रहमान सर्वसाधाराण के लिए काव्य रचना करता है वह कहता है कि "जो न मूर्ख हो और न पण्डित, अपितु बीच की श्रेणी का हो, उसके सामने यह काव्य सदैव पढ़ा जाना चाहिए।"

ग्रियर्सन आधुनिक आर्य भाषाओं को भीतरी और बाहरी शाखाओं में बांटता है। भीतरी उप शाखा में 'पश्चिमी हिन्दी' को रखता है- और बाहरी शाखाओं में जिन भाषाओं को रखता है उन्हें वह अवैदिक या असंस्कृत कहता है, जिनमें मागधी, सिंहली, जिप्सी आदि आती हैं। हांलाकि सुनीति कुमार चटर्जी ने इस मत की आलोचना की है।

आधुनिक आर्यभाषा-

अपभ्रंश के विभिन्न स्थानीय रूप 100 ई. के आसपास अवहट्ट रूपों से होते हुए आधुनिक भाषा रूप में विकसित हो गए । आधुनिक भारतीय आर्य भाषाओं में प्रमुखतः वही विशेषताएं मिलती हैं जो प्राकृत, आदि में थीं ।

हम आज जिस हिन्दी भाषा को जानते हैं, उसका यह रूप पन्द्रहवीं सदी के वाद स्थिर होना शुरू हुआ यह 'हिन्दी' नाम भी तभी सुनाई दिया । आधुनिक आर्य भाषाओं के विकास में विद्वान जिस 'हिन्दी' की वात हैं वह यह हिन्दी नहीं है। 1000 ई. के आसपास की जिस हिन्दी की हम वात करते हैं जिसे 'पुरानी हिन्दी' भी गया उसका रूप और व्याकरण अपभ्रंश के काफी करीव था। धीरे-धीरे हिन्दी इससे दूर होती गई । हिन्दी के रूप पालि में भी मिलते हैं, प्राकृत में यह और अधिक होते जाते हैं, अपभ्रंश का तो लगभग आधा भाग ही इन से भरा पड़ा है । इस समय इस भाषा के विभिन्न स्थानीय रूप जिनसे वाद में हिन्दी वनी वे राजस्थानी, मैथि अवधी, व्रज तथा दक्खिनी आदि हैं। मुसलमानों के आगमन और उनके केन्द्रीय सत्ता में स्थापित होने पर उनके प्रयुक्त भाषा भी केन्द्र में आती है और भाषा एक नया रूप लेने लगती है। अव 'हिन्दी' एक भाषा के रूप में के और मानक रूप लेने की ओर वढ़ती दिखाई देने लगती है जो भारतेंदु हरिश्चन्द्र के समय तक एक 'विकसित' हो जाती है, जिसे देखकर ही भरतेंदु ने कहा था " हिन्दी एक नई चाल में ढली।"

संदर्भ :-

1. मारीयो पी; द स्टोरी ऑफ लेंग्वेज, भाषा परिषद 1940
2. द कम्परेटिव एनाटोमी एण्ड फिजियोलाजी आफ द लैरिंक्स, लन्दन 1949
3. भोलानाथ तिवारी, भाषा विज्ञान, किताव महल 2003
4. उदय नारायण तिवारी, हिन्दी भाषा का उद्गम और विकास लोक भारती 2003
5. भोलानाथ तिवारी, भाषा विज्ञान, किताब महल 2003
6. डॉ. नीलकंठ शास्त्री, ए हिस्ट्री आफ साउथ इंडिया
7. भोलानाथ तिवारी, भाषा विज्ञान, किताब महल 2003
8. वही 2003
9. वही 2003
10. वही 2003